इकाई 2 चेम्मीन : युग परिवेश

इकाई की रूपरेखा

2.0 उद्देश्य

2.1 प्रस्तावना

2.2 बीसवीं सदी के आरंभ में केरल : सामाजिक/राजनीतिक स्थिति

2.3 मलयालम में उपन्यास लेखन की परम्परा

2.3.1 आरंभिक उपन्यास

2.3.2 अनूदित उपन्यास

2.4 चेम्मीन और सामाजिक अवबोध

2.5 सारांश

2.6 प्रश्न

2.0 उद्देश्य

इस खण्ड की यह दूसरी इकाई है। इस इकाई के अध्ययन से आप चेम्मीन के युग परिवेश के बारे में परिचित हो सकेंगे। उन्नीसवीं सदी के अंत और बीसवीं सदी के आरंभ में केरल में राजनीतिक, सामाजिक परिस्थितियाँ कैसी थी यह भी जान सकेंगे। उस समय मलयालम में साहित्यिक परम्परा कैसी थी इसका अध्ययन भी इस इकाई में आप करेंगे। और अंत में चेम्मीन का सामान्य परिचय भी प्राप्त करेंगे।

2.1 प्रस्तावना

उन्नीसवीं सदी के अंतिम भाग और बीसवीं सदी के प्रारंभ का केरल, देश के अन्य भागों से पूरी तरह अछूता नहीं था। राजनीतिक भूभाग की दृष्टि से भी यह वैसा केरल नहीं था जैसा कि आज हम इसे जानते हैं। अंग्रेज़ी शासन के दौरान विभिन्न रियासतों का नियंत्रण विभिन्न राजाओं, शासकों के हाथों में रहता था। केरल की भी यही स्थिति थी। सामाजिक दृष्टि से केरल में सामंती सभ्यता के अवशेषों से लड़ाई जारी थी। स्वतंत्रता आंदोलन का, अन्य सामाजिक आंदोलनों का प्रभाव केरल के समाज पर भी पड़ रहा था। कई सामाजिक कुरीतियों को दूर करने के लिए यहाँ कई आंदोलनों का सूत्रपात हुआ। इन सभी परिस्थितियों में यहाँ का साहित्य भी अपनी स्थानीय भूमि में रंग कर विकसित होता दिखाई पड़ता है। मलयालम उपन्यास की परम्परा कैसी रही है, के अलावा इन परिस्थितियों का अध्ययन भी चेम्मीन को जानने-समझने में सहायक और ज़रूरी है। तो आइए, सबसे पहले केरल की इन सामाजिक-राजनीतिक परिस्थितियों को जानें।

2.2 बीसवीं सदी के आरंभ में केरल : सामाजिक/राजनीतिक स्थिति

सत्रहवीं और अठारहवीं शताब्दी में केरल में भी सामंती सभ्यता का वैसा ही समाज था जैसा कि देश के अन्य भागों में था। समाज के अधिकांश लोग गुलामी का-सा जीवन व्यतीत करते थे। ये लोग छोटी जाति के थे। समाज में ऊँच-नीच का खूब बोलबाला था। ऊँची-जाति के लोगों के विरोध की बात सोचना भी मुश्किल था। 19वीं सदी के अंत तक आते नेपथ्य में सामाजिक क्रांति के बीज पनपने लगे थे। केरल के समाज में भी बंगाल के नवजागरण का-सा माहौल बन रहा था। प्रशासनिक तंत्र, भूनियम, शिक्षा, धर्म, समुदाय गठन, पत्रकारिता,

स्वतंत्रता संग्राम, नागरिक अधिकार आदि सामाजिक-जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में नव जागरण की लहर एक नवोत्थान के रूप में फैल रही थी।

वास्तव में 1901 से 2000 तक की बीसवीं सदी के दौरान केरल की सामाजिक स्थिति में बहुत परिवर्तन हुए हैं। विश्वभर में हुए बौद्धिक परिवर्तनों, औद्योगिक विकास, भौतिक विज्ञान की प्रगति, महायुद्धों की टकराहट, विभीषिका आदि ने भी इस परिवर्तन की शक्ति और तीव्रता को बढ़ावा दिया है। इसलिए बीसवीं सदी में केरल के समाज में जो भी विकास हुआ, जो भी पारिस्थितिक परिवर्तन दिखाई पड़े, उन सब की जड़ें 19वीं सदी के अंतिम दशकों में ही पनपने लगी थीं।

19वीं सदी के अंत में केरल के सामाजिक क्षेत्र में शुरू हुए परिवर्तनों का लक्ष्य, सामंती सभ्यता की भीषणताओं और दुष्परिणामों से मुक्ति पाना था। उस समय का केरल राज्य आज के केरल राज्य से भिन्न था। उस समय केरल मालाबार, कोच्ची और तिरुविन्ताकूर नामक तीन अलग-अलग राज्यों में बँटा हुआ था। मलाबार राज्य (उत्तरी केरल) ब्रिटिश सत्ता के प्रत्यक्ष शासन के अधीन था। कोच्ची (मध्य केरल) और तिरुविंताकूर (दक्षिण केरल) ब्रिटिश सत्ता को मानने वाली रियासतें थीं मालाबार राज्य के लिए आवश्यक विधान मद्रास सरकार बनाती थीं। इसलिए कोच्ची और तिरुविंताकूर रियासतों की अपेक्षा वहाँ भिन्न सामाजिक परिस्थितियाँ थीं। कोच्ची और तिरुविंताकूर रियासतें ब्राह्मणों के अधीन थीं। शासन का लक्ष्य मानो ब्राह्मणों के हित की रक्षा ही था। इसलिए अवर्णों को छुआछूत, जातिभेद के पागलपन, शोषण की मार झेलनी पड़ती थी। कांग्रेस द्वारा आज़ादी की लड़ाई के लिए शुरू किए गए कार्यों, साम्यवादी विचारधारा के फैलने तथा धर्म प्रचारकों के शिक्षा कार्यों ने केरल में इस स्थिति में परिवर्तन लाना शुरू किया।

ब्रिटिश शासन के तहत मालाबार की जनता को नागरिक अधिकारों का अनुभव सबसे पहले हासिल हुआ। 1792 में मालाबार में गुलामी तिरोहित हुई। अवर्ण जनता को सीमित रूप में ही सही, सरकारी नियुक्तियों में जगह और मुक्त रूप से चलने-फिरने की आज़ादी ब्रिटिश सरकार के कारण हासिल हुई। सारे जातिगत अवरोधों को हटाने में ब्रिटिश सरकार असमर्थ थी। छुआछूत जैसी प्रथा तो चलती रही। 1855 में अपने राज्य में गुलामी को हटाने के लिए तिरुविंताकूर का राजा भी प्रेरित हुआ। राजा को इसके लिए प्रेरित करने वाले समाज में काफ़ी सामाजिक गतिविधियाँ मौज़ूद थीं। धर्म के प्रचार के लिए मिशनरियों का सामाजिक कार्य भी ऐसी ही एक महत्वपूर्ण गतिविधि थी। 1806 से 1840 के दौरान ऐसी मिशनरियों ने नागरकोविल, कोट्टयम, कोषिक्कोड, कण्णनूर आदि स्थानों में अंग्रेज़ी स्कूलों एवं कॉलेजों की स्थापना की। उन्होंने अवर्णजाति के लोगों से किसी छुआछूत भेद को नहीं दिखाया। उसके बदले उन्हें मनुष्य माना, शिक्षा प्रदान की, स्वास्थ्य संबंधी सुविधाएँ मुहैय्या करवाईं। फलतः उन लोगों ने स्वयं अपने हित की खातिर ईसाई धर्म स्वीकार कर लिया। अंग्रेज़ी शिक्षा के ज़रिए समता एवं भाईचारे की विचारधारा प्रवाहित हुई। धर्मपरिवर्तन के मुद्दे को लेकर आज समाज में जो उथल-पुथल चल रही है और ज़बरन धर्म परिवर्तन की जिस बात को झूठे ही स्थापित करने की चेष्टा हो रही है, उसमें इस बात को समझने की कोशिश ही नहीं की जा रही है कि क्यों तमाम मजलूम लोग अपना धर्म परिवर्तन करने को विवश होते हैं। सवर्ण लोगों द्वारा अवर्ण लोगों पर किए गए अत्याचारों का यदि पूर्ण खुलासा किया जाए तो ही पता चलेगा कि सवाल धर्म परिवर्तन का नहीं बल्कि सवर्ण जातियों को अपने व्यवहार, दृष्टि में आमूलचूल परिवर्तन करने की आवश्यकता अधिक है। यही वह कारण है कि केरल के समाज में अवर्ण लोगों ने ईसाई धर्म स्वीकार किया। समाज में मानवीयता, नागरिक अधिकार, व्यक्ति स्वतंत्रता आदि विचार भी प्रचलित हुए। मनुष्य को अपने अधिकारों के ज्ञान का एहसास हुआ। जो गुलामी विरोध, चलने-फिरने की स्वतंत्रता, अवर्णजाति की स्त्रियों की छाती ढकने और इच्छानुसार स्वर्णाभूषण पहनने की स्वतंत्रता, विद्यालयों एवं आराधनालयों में प्रवेश पाने का अधिकार आदि लोकतांत्रिक अधिकारों की पूर्ति के लिए केरल भर में अनेक आंदोलन चले। 1859 में स्त्रियों को अपनी छाती ढकने का अधिकार मिला। 1865 में चलने-फिरने की स्वतंत्रता भी दी गयी, हालाँकि अवर्ण जाति के लोगों को मंदिरों में प्रवेश पाने की राज-घोषणा के लिए 1932 तक प्रतीक्षा करनी पड़ी।

बीसवीं शताब्दी के प्रथम दशकों की केरल की सामाजिक व्यवस्था में परिवर्तन लाने वाला प्रधान घटक था स्वतंत्रता संग्राम की तीव्रगति।सामंती शासन के अधीन असीम अधिकारों से युक्त दीवान (प्रधानमंत्री) यहाँ की कुल नियुक्तियों का सत्तर प्रतिशत भाग और सभी ऊँचे पद सारे के सारे तमिष ब्राह्मणों को दे देते थे। ये नियुक्तियाँ राज्य के बाकी लोगों को प्राप्त हों, इस माँग को लेकर अनेक अभियान चलाये गये जिनमें मुख्य हैं मलयाली मेमोरियल (1891) और ईषव मेमोरियल (1896) अभियान। उसी काल के आस-पास (1905) में 'स्वदेशाभिमाना' पत्र ने राजशासन के विरुद्ध ऊँगली उठायी और जनशासन का आह्वान किया। उसका परिणाम था पत्र के संपादक रामकृष्ण पिल्लै को देश निकाला मिलना (1910) फिर भी जनशासन तंत्र की विचारधारा राज्यभर में प्रचरित हुई। इस राजनीतिक विचारधारा की लोकप्रियता से कांग्रेस के प्रचार के लिए अनुकूल वातावरण बना।

कांग्रेस के कार्यकलाप केवल स्वतंत्रता की माँग तक ही सीमित नहीं रहे। 1920 में मंचेरी में आयोजित कांग्रेस सम्मलेन में पारित विभिन्न प्रस्ताव इस बात की ताईद करते हैं: वाइसराय को वापस बुलाओ, राउलट एक्ट चालू करो, खिलाफत-असहयोग आन्दोलनों में सहयोग दो, प्रविश्या प्राविन्स को स्वायत्त शासन प्रदान करो, कृषि में सुधार लाओ, पट्टेदारों और अधिवासी कृषकों को भूमि पर पूर्ण स्वत्वाधिकार दो, अधिवासी निष्कासन को बन्द करने के विधान की माँग इत्यादि। 1920 में गांधीजी और शौकत अली ने केरल का भ्रमण किया था। 1921 के मंचेरी कांग्रेस अधिवेशन पर उसका प्रभाव दिखाई पड़ा। सम्मेलन में जितनी भीड़ लगी थी उतनी कोषिक्कोड ने कभी नहीं देखी थी। जब से कांग्रेस ने मन्दिर प्रवेश, छुआछूत विरोध आदि समस्याओं को अपने हाथों में लिया तब से उसकी लोकप्रियता बढ़ने लगी। 1938 में तिरुविंताकूर स्टेट कांग्रेस के गठन के साथ ही सामाजिक सुधारों की माँग की प्रासंगिकता भी बढ़ने लगी।

समाज के नेताओं ने सामाजिक संगठन बनाकर जो अभियान लाये, उन अभियानों ने केरल के सामाजिक जीवन में समग्र-परिवर्तन कर डाला। अवर्ण जाति के श्रीनारायण गुरू ने श्रीनारायण धर्म परिपालन योग (1903) और श्री अय्यानकाली ने साधुजन परिपालन योग (1907) की स्थापना की। इन संगठनों द्वारा अवर्ण जाति के लोगों का आत्मगौरव और नागरिक बोध अधिकाधिक बढ़ा। नायर जाति के लोग ब्राह्मणों के सेवक और कारिन्दे थे। नायर स्त्रियों से ब्राह्मणों का 'संबंध' (रखैल जैसा विवाहेतर संबंध) रहता था तो उनके प्रति भी ब्राह्मण छुआछूत मानते थे। मन्नतु पद्मनाभन ने नायर जनता की सांस्कृतिक प्रगति के लिए नायर सर्विस सोसाय़टी (1914) की स्थापना की। उसके पहले ब्राह्मण-समाज के अनाचारों को दूर करने के लिए नम्पूतिरि योग क्षेम सभा (1907) का गठन हो चुका था। केरल के सभी जाति वालों ने अपने-अपने सामाजिक संगठन बनाये लेकिन किसी भी संगठन में नेता दूसरा नहीं हुआ जिसमें विद्या, आत्मीय तेज, कर्मठता आदि गुण विद्यमान हों। जाति-धर्म के ऊपर सोचने में, सभी लोगों को समन्वित करने में वे सफल बनें।

सवर्ण-अवर्ण भेद-भाव जैसे हिन्दूधर्म के अनाचारों का हिन्दूधर्म के सिद्धान्तों के सहारे ही विरोध किया। अपनी विचारधारा के प्रचार के लिए उन्होंने अनेक ग्रन्थों की रचना की। इस प्रकार केरल के सभी समाज के लोगों को श्रीनारायण गुरु ने सांस्कृतिक एवं आत्मपरक जागरण के लिए प्रेरित किया।

सामाजिक परितर्वनों की भूमिका में भू-नियमों में आए बदलावों का भी काफ़ी योगदान रहा। सारी भूमि भंडार (शासनसत्ता) की थी। फिर भी उनका स्वामित्व नम्पूतिरियों और नायरों को प्रदान किया गया था। अवर्ण जाति के लोग और माप्पिला (मुसलमान) पट्टेदार रहते थे। अधिवासियों का जीवन कष्टतापूर्ण ही बना रहता था। गुलामों की तरह काम करना और भूस्वामी के आदेशानुसार भूमि से बेदखल हो जाना - इसके अलावा दूसरा कोई रास्ता भी नहीं था। 1865 से भूमिसुधार नियम लागू हो गया। भूमि से बेदखल करने की प्रथा का विरोध, अधिवासियों को स्वामित्व देना, भूमि की सीमा निर्धारित करना आदि कार्य इस काल में कानून द्वारा लागू कर दिये।

अंग्रेज़ी शिक्षा के प्रचार से पत्रकारिता क्षेत्र में अपूर्व प्रगति हुई। जून 1847 में रराज्यसमाचार रु नामक मासिक पत्रिका प्रकाशित करते हुए डॉ. हेर्मन गुण्डर्ट ने केरल में पत्रकारिता का श्रीगणेश किया। इस क्षेत्र में भी मिशनरियों ने प्रारंभिक कार्य किया था। 1888 मे मलयालम मनोरमा, 1911 में केरलकौमुदी, 1922 में मातृभूमि आदि पत्र प्रकाशित हुए जो आज भी निकल रहे हैं। बीसवीं शताब्दी के प्रथम दशकों में अनेकानेक नये पत्र निकले। देश की एवं व्यक्ति की स्वतंत्रता, आर्थिक स्वतंत्रता, जनतंत्र शासन, साम्यवाद, समाजवाद आदि नये-नये लोकतांत्रिक एवं क्रांतिकारी विचारों ने सामाजिक परिवेश में उथल-पुथल मचा कर उसे गतिशील कर दिया। इन परिवर्तनों को जनता तक पहुँचाने में पत्र-पत्रिकाओं ने बहुत योगदान दिया। इस यत्न के परिणामस्वरूप कई बार उन्हें देश निकाला जैसी पीड़ाओं को सहना पड़ा था। तकषि ने उस काल को साहित्य एवं जीवन के गतिरोध का काल कहा है। उस रोध को हटाकर उसे नये मार्ग की ओर अग्रसर करने का दायित्य तकषि जैसे लोगों ने निभाया।

2.3 मलयालम में उपन्यास लेखन की परम्परा

सभी बड़े लेखकों एवं रचनाकारों की अपनी-अपनी लेखन शैली एवं जीवनदर्शन होता है। इसके अलावा प्रत्येक युग के साहित्य की अपनी अलग विशेषताएँ और रचनाशिल्प होता है। जो उस युग, समाज की राजनीतिक, नैतिक, सामाजिक परिस्थितियाँ तय करती हैं। उदाहरण के रूप में साहित्य की क्लासिक रीति को लें। उस दौरान साहित्य और कला उच्च बौद्धिक स्तर के कल्पनाशील रचनाकारों का कार्यक्षेत्र था। इसी प्रकार यथार्थवाद, प्रकृतिवाद, अस्तित्ववाद आदि अलग-अलग सामाजिक दशाओं और उनके प्रति कथाकार की प्रतिक्रिया से रूपायित होते हैं।

बीसवीं सदी के आरम्भ में मलयालम साहित्य में स्वछन्दतावादी प्रवृत्ति अधिकतर काव्य में ही अभिव्यक्त होती थी। चमत्कारी भाषा काव्य की विशिष्टता मानी जाती थी। लेकिन गद्य लेखन, विशेषकर उपन्यास में यह बात नहीं थी। उपन्यासों में यथार्थ शैली के दर्शन होते हैं। मलयालम साहित्य के प्रथम उपन्यासकार ओ.चन्तुमेनोन का कथन है - 'मैंने घर में प्रयुक्त होने वाली भाषा में उपन्यास लिखा।' इस कथन से स्पष्ट है कि वे सवर्ण, मध्यवर्गीय परिवारों में प्रयुक्त होने वाली भाषा की बात कर रहे हैं। चन्तुमेनोन के उपन्यासों में कल्पना का अद्‌भुत कौशल दिखाई पड़ता है।

प्रारंभिक मलयाली उपन्यासों में स्वछन्दतावाद और यथार्थवाद का मिश्रण दिखाई पड़ता है। इस दौर के दोनों प्रतिनिधि उपन्यासकारों में ये दोनों प्रवृत्तियाँ दिखाई पड़ती हैं। दोनों लेखक वर्तमान सामाजिक संरचना तथा मूल्य व्यवस्था का विरोध नहीं करते हैं। सी.वी. रामनपिल्लै सामंती शासन की अच्छाइयों को प्रतिष्ठित करना चाहते हैं और चन्तुमेनोन व्यक्ति स्वतंत्रता का विरोध करने वाली रीति-नीतियों की निंदा करते हैं। दोनों को इसका अनुभव नहीं है कि वर्तमान व्यवस्था में आमूल परिवर्तन के लिए कोई ज़रूरी घटक समाज में मौजूद हैं या नहीं। केवल कांग्रेस की चर्चा करते समय चन्तुमेनोन के लेखन में नवोत्थान की प्रवृत्तियों का हल्का सा इशारा दिखाई पड़ता है।

दूसरी पीढ़ी ने नवोत्थान विचारधारा एवं स्वतंत्रता संग्राम को एक साथ मिलाकर देश प्रेम पर आधारित साहित्य शैली अपनायी। उसमें कांग्रेस एवं गांधीजी के आदर्शों (देशप्रेम और अहिंसा) को मुख्य स्थान मिला था। इन मूल्यों पर विश्वास होने के कारण व्यक्ति स्वातंत्र्य, सामाजिक नीति, शिक्षा प्रकार, छुआछूत उन्मूलन आदि सामाजिक परिवर्तन प्रक्रिया को अहिंसा, असहयोग, सत्याग्रह आदि समर तंत्रों ने नियंत्रित रखा। कुछ लोगों का विश्वास था कि सामाजिक उथल-पुथल की शक्ति और तीव्रता इन आशयों पर आधारित साहित्य में नहीं है और इसलिए वे समाजवादी एवं मार्क्सवादी रास्तों को अपनाने लगे।

सामाजिक समानता के लिए तृषित मानसों में समाजवाद और मार्क्सवाद अग्निज्वाला बनकर प्रकट हुए। वे पहचान सके कि सामाजिक समानता को रोधित करने वाली शक्ति भूस्वामी - धनी - पुरोहित वर्गों का संघ है। इस संघ की सहायता लेकर धनी वर्ग - निर्धन वर्ग का

शोषण करते हैं। इसलिए सामाजिक नीति के लिए लड़ने का आह्वान देते हुए साहित्य आमजन के पक्ष में नव पथ में प्रविष्ट हुआ। सामाजिक समानता एवं आर्थिक समानता चाहने वाले लोगों ने आवेग और आश्चर्य के साथ अक्टूबर क्रांति की ओर दृष्टिपात किया। इस परिवर्तनगामी घटना पर साहित्यकारों ने रचनाएँ की। उन्होंने उस रीति को जीवन साहित्य, प्रगति साहित्य जैसे नाम दिये। 1937 में प्रगति साहित्य एक अभियान के रूप में सामने आया। केरल में ही नहीं सारे भारत के साहित्यकार इस दिशा में सोच रहे थे। समीक्षकों में एम.पी. पोल, केसरी बालकृष्ण पिल्लै, जोसेफ मुण्डशेरी आदि सामाजिक परिवर्तन के पक्ष में खड़े हुए। इस नई रीति से कहानी एवं उपन्यास को अधिक लाभ पहुँचा। तकषि, केशवदेव बशीर, पोट्टेक्काट, पोनकुन्नम वर्की आदि ने सामाजिक असमानता, शोषण नीति, अनीति आदि को अपनी रचनाओं का विषय बनाकर अनेक कहानियाँ और उपन्यास रचे।

प्रगतिशील विचारधारा के साथ उभर आयी दूसरी एक धारा पर भी विचार करें तो तकषि के जीवन काल की पूर्ण विशिष्टता सामने आ जाएगी। प्रगतिशील साहित्यकारों को यथार्थवादी शैली पसन्द थी। यथार्थ शैली को अधिकाधिक सत्यपूर्ण एवं तथ्यपूर्ण बनाने के लिए प्रयास में कलातत्व एवं वस्तु में अधिक अन्तर न रहा था। भाव तत्व एवं कल्पनातत्व का समावेश भी बहुत कम रहा। यहाँ तक कहा जाने लगा कि कोई भी व्यक्ति, प्रगतिशील साहित्यकार बन सकता है। क्योंकि श्रमिक वर्ग की सत्ता, आर्थिक समानता, सामाजिक क्रांति आदि, विषयों को कलासृष्टि मे समाविष्ट करना ही यथार्थवादी लेखन माना जा रहा था। इसी संदर्भ में रूपभद्रतावादी मनीषियों का प्रवेश हुआ, जिन्होंने कहा कि भावों की अभिव्यक्ति भद्र रूपों में होनी चाहिए। वस्तु जो भी हो, विषय कोई भी हो, अभिव्यक्ति सुन्दर होनी चाहिए तभी वह कला कहलाने योग्य बनेगी। इस आशय को भी अनन्तरकाल में एक वर्ग के द्वारा मान्यता मिल गयी।

समाज के यथार्थ को प्रतिबिंबित करने वाला दर्पण है साहित्य। समाज की सुस्थिति को स्थायी बनाने की मनोदशा सहृदयों में उत्पन्न करने की क्षमता उपन्यासकार में होनी चाहिए। टालस्टाय ने कहा है, "कला का दायित्व भारी है। कला की प्रेरणा के ज़रिए और विज्ञान एवं धर्म के शांतिपूर्ण समन्वय से (बाहरी ताकतों की प्रेरणा अथवा दबाव के बिना) मनुष्य के स्वतंत्र और आनन्दकारी कार्यकलाप साध्य हो जाएँ।" जो उपन्यास इसके योग्य न हों, वे सौन्दर्य एवं मूल्य की दृष्टि से पराजित हो जाएँगे। उपन्यास का आधारभूत तत्व यह है कि उसे किसी मूल्य पर टिके रहना चाहिए।

2.3.1 आरंभिक उपन्यास

आधुनिक मलयालम साहित्य में गद्य में कथा कहने की रीति दिखाई पड़ती है। लेकिन कथाकथन मलयालम के लिए उराके पूर्व अपरिचित नहीं था। पहले पद्यों में अथवा गीत शैली में कथा कहने की रीति प्रचलित थी। उपन्यास शैली अंग्रेज़ी शिक्षा के साथ प्रारंभ हुई। यह स्वतंत्र एवं असीम संभावनाओं वाली शैली थी। इसलिए जल्दी ही इसने साहित्य में अपनी जगह बना ली। मलयालम उपन्यास का प्रारंभ ही अपने वैविध्यपूर्ण रूपों को प्रकट करते हुए हुआ था। सामाजिक, ऐतिहासिक, जासूसी, राजनीतिक आदि भिन्न प्रकार के उपन्यास आरंभिक रचनाओं में उपलब्ध हैं।

श्रीमती कोलिन्स का 'घातक वध' (1878) आर्च डीकन कोशी का 'पुल्लोलि कुंजु' (1882) अप्पु नेटुंगाडी का 'कुन्दलता' (1887) आदि मलयालम के प्रारंभकालीन उपन्यास हैं। 'घातक वध' सामाजिक उपन्यास है। ईसाई धर्म में परिवर्तित एक निम्न जाति के व्यक्ति को सिरियन ईसाई लोग अपने समाज में प्रविष्ट नहीं होने देते थे। यही इसकी कथावस्तु है। उपन्यास में इस बात की निन्दा की गयी है। इस दृष्टि से यह एक सामाजिक उपन्यास है लेकिन उपन्यास की रचना शैली और आख्यान रीति सामान्य नहीं है।

पुल्लेलिकुंजु नामक उपन्यास में हिन्दू-ईसाई संवाद है। वर्ण विवेचन एवं मूर्ति पूजा संवाद के विषयों में सम्मिलित है। यह उपन्यास प्रबोधनात्मक है तो भी कथाकथन की चारुता इसमें नहीं है। 'घातक वध' इसकी अपेक्षा अच्छी रचना है।

उपर्युक्त दोनों उपन्यास पहले लिखे गये हैं तो भी साहित्य के इतिहास में 'कुन्दलता' को प्रथम उपन्यास माना जाता है। इसकी कथावस्तु शेक्सपीयर के सिंबलिन से ली गयी है। इसलिए उपन्यास की मौलिकता की दृष्टि से 'घातक वध' पहले आता है। 'कुन्दलता' की वर्णन शैली, भाषा की सरसता, कथा की रसिकता आदि पाठकों को आकृष्ट करने वाली है। 'इन्दुलेखा' दो वर्षों के अन्तर में प्रकाशित हुआ, लेकिन गुणवत्ता की दृष्टि से यह अन्तर पच्चीस वर्षों का लगता है।

प्रबंधन की दृष्टि से सम्पूर्ण उपन्यासों की रचना कुन्दलता के बाद ही होने लगी। पहला उपन्यास ओ. चन्तुमेनोन का 'इन्दुलेखा' (1889) है। साहित्य के इतिहास इन्दु लेखा को मलयालम का प्रथम लक्षणयुक्त उपन्यास मानते है। चन्तुमेनोन अनेक पाश्चात्ये उपन्यासों के रसिक पाठक थे। बीकन्स फील्ड के 'हेन्टिटा टेंपिल' और जेईन ओस्टिन के 'प्राइड एण्ड प्रेजडिस' की तरह का एक उपन्यास लिखने की इच्छा उनमें हुई। सामन्ती सभ्यता के अन्तिम चरण में मातृदाय क्रम से पितृदाय क्रम में परिवर्तित होने के इच्छुक एक केरलवासी की कथा इन्दुलेखा में वर्णित है। माधव और इन्दुलेखा नामक कथापात्रों के द्वारा उस परिवर्तन की और उसकी प्रेरक सांस्कृतिक पृष्ठभूमि की कहानी बनायी गयी है। अंग्रेज़ी शिक्षाप्राप्त नायक-नायिका हैं माधव और इन्दुलेखा। ये दोनों पात्र व्यक्ति स्वतंत्रता, आर्थिक समानता, पितृदाय क्रम, सुदृढ़ विवाह संबंध, स्त्री-पुरुष को आधुनिक शिक्षा मिले, इन बातों के पक्षधर हैं। चन्तुमेनोन अपने काल में प्रचलित सामाजिक नीतियों के विरोधी थे। वे नीतियाँ थीं - सौ से अधिक सदस्यवाला मिला जुला परिवार, नाममात्र की आर्थिक स्वतंत्रता, अल्प संस्कृत ज्ञान और श्रृंगार श्लोकों में सीमित शिक्षा, शिक्षा का अधिकार केवल एक या दो व्यक्तियों के लिए, अव्यवस्थापित विवाह संबंध, उससे जन्म लेने वाले बच्चों से पिता का छुआछूत मानना आदि।

चन्तुमेनोन का दूसरा उपन्यास 'शारदा' (1892) अपूर्ण है। शारदा के ज़रिये स्नेह-विद्वेषों के अधीनस्थ होकर स्नेह-विद्वेषों में जीने वाले मनुष्य की प्रकृति का चित्रण करना लेखक का लक्ष्य था। उस लक्ष्य को प्राप्त करने का अवसर उन्हें प्राप्त नहीं हुआ। इसमें एक लम्बे मुकदमे की कथा है। चार उपन्यासकारों ने अधूरे उपन्यास को पूरा करने का प्रयत्न किया, तो भी प्रश्न अनुत्तरित रह गया है कि चन्तुमेनोन की क्या कथा थी।

प्रारंभ काल के दो उपन्यासकारों में दूसरा है सी.वी. रामनपिल्लै। उन्होंने मार्ताण्ड वर्मा (1891) धर्मराज (1917) रामराजा बहादुर (1920) नामक ऐतिहासिक उपन्यास और 'प्रेमामृत' नामक सामाजिक उपन्यास लिखे। सी.वी. पाश्चात्य उपन्यासों से परिचित थे। वाल्टर स्कोट के 'ऐवान हो' की रीति में उन्होंने मार्तण्ड वर्मा की रचना की। तीनों ऐतिहासिक उपन्यासों में तिरुविंताकूर रियासत का इतिहास है। इतिहास के साथ-साथ अनेक काल्पनिक कथापात्र और घटनाएँ भी हैं। ऐतिहासिक उपन्यासों की रचना में सी.वी. के समकक्ष रखने योग्य उपन्यासकार मलयालम साहित्य में नहीं हुआ है। उनकी आलंकारिक एवं चमत्कृत शैली में किसी भी विषय को असाधारण और आश्चर्यपूर्ण बनाने की शक्ति है। "व्यक्तित्व ही शैली है" कथन का उत्तम प्रतीक है सी.वी. रामनपिल्लै। 'प्रेमामृत' उनका सामाजिक उपन्यास है, लेकिन उसको उतना महत्व प्राप्त नहीं है। राज पक्ष एवं सत्य पक्ष दोनों को महत्व दिया है सी.वी. ने। परंपरा और वंश महिमा पर उनका विश्वास था, लेकिन उनकी रचनाओं से व्यक्त हो जाता है कि मानव जीवन अनन्त महाप्रवाह है। उनकी रचनाओं से संदेश मिलता है कि उस प्रवाह को नियंत्रित करने वाली एक अदृश्य शक्ति है और उस शक्ति पर भरोसा रखते हुए परिश्रम करने पर हम लक्ष्य तक पहुँच सकते हैं। सी.वी. की आख्यान शैली आज के उपन्यासकारों के लिए भी एक चुनौती है, साथ-साथ प्रेरक भी।

चन्तुमेनोन, सी.वी. रामनपिल्लै जैसे प्रतिभाधनियों और नवोत्थान काल के उपन्यासकारों के बीच इतिहास प्रधान उपन्यास नहीं के बराबर है। फिर भी चन्द रचनाएँ उल्लेखनीय हैं। केरलवर्मा का 'अकबर' (1894) अनूदित उपन्यास है जिसकी मूल डच भाषा है। प्रारंभकालीन

अनुवादों में प्रथम स्थान इस ग्रंथ को दिया जा सकता है। भूतरायर, भास्कर मेनोर (1904) आदि अप्पन तंपुरान की कृतियाँ हैं। केरल के इतिहास से संबंधित कुछ घटनाओं के आधार पर 'भूतरायर' रचा गया है। 'भास्कर मेनोन' एक जासूसी उपन्यास है। उसमें एक प्रेमकथा वर्णित है, लेकिन साथ-साथ किट्टुण्णि मेनोन नामक कथापात्र की हत्या का जासूसी अन्वेषण मुख्य विषय है।

कुछ राजनीतिक उपन्यास भी इस काल में लिखे गये। के.नारायण कुरूक्कल का 'पारप्पुरम' (1904-5) 'उदयभानु' (1906) आदि उनमें उल्लेखनीय उपन्यास हैं। इन उपन्यासों में तिरुविंताकूर रियासत की शासन नीति, प्रशासनिक अनीतियाँ आदि विषय चर्चित हैं। तो भी उपन्यास की दृष्टि से कोई महत्वपूर्ण उपलब्धियाँ इनसे प्राप्त नहीं होती हैं।

मलयालम साहित्य के इतिहास से मालूम हो जाता है कि इस काल में उपन्यासों की संख्या में अतिशय वृद्धि हुई। इन्दुलेखा के अनुकरण में मलयालम प्रदेश की कन्याओं के नाम पर असंख्य उपन्यास लिखे गये। उनकी कल्पनाशून्यता और बनावटी भाषा शैली की हँसी उड़ाते हुए किषक्केप्पाट्टु रामन मेनोन ने 'परंगोडी परिणय' नामक हास्य उपन्यास की (1892) रचना की। रचना की तिथि की दृष्टि से इन्दुलेखा (1889) शारदा (1892) मार्ताण्ड वर्मा (1891) उपन्यासों को छोड़कर बाकी उपन्यासों को 'परंगोडी परिणय' उपन्यास रूपी हास्य दंड का प्रहार मिला है। यह मलयालम का प्रथम हास्य उपन्यास है।

प्रतिपाद्य विषय में मौलिकता दिखाने वाली कुछ रचनाएँ भी इस काल में लिखी गयीं। कुनुकुषियिल कोच्चुतोम्मन के 'परिष्कार प्याति' नामक उपन्यास में अपनी इच्छा के अनुसार एक पति को चुन लेने वाली ईसाई महिला की कथा कही गई है। यह उस काल का एक क्रांतिकारी विषय था। पोतेरी कुंजम्मु के 'सरस्वती विजय' नामक उपन्यास का विषय एक भ्रष्टा अन्तर्जनक नुपूतिरी महिला और निम्नजाति के एक बालक की कथा है जो शिक्षा पाकर जीवन में सफलता प्राप्त करते हैं। 'दोरश्राणी' नामक उपन्यास के द्वारा उपन्यासकार सरदार के एम पणिक्कर ने यह दिखाने का प्रयास किया है कि खोखली सभ्यता केरल की महिलाओं के लिए स्वीकार्य नहीं हो सकती। नंपूतिरी समाज में प्रचलित अनाचारों का विरोध करते हुए लिखा गया उपन्यास है भवव्रातन नंपूतिरिप्पाड का 'अफन्टे मकन'। इन सभी उपन्यासों का आधार है ब्रिटिश शासन और अंग्रेजी शिक्षा के फलस्वरूप प्राप्त नवोत्थान विचारधाराएँ। लेकिन अंधाधुंध पाश्चात्य अनुकरण के लिए कोई तत्पर नहीं था।

2.3.2 अनूदित उपन्यास

उपन्यास शाखा के नवोत्थान का मार्गदर्शक है अनूदित उपन्यास। अंग्रेजी के द्वारा विश्व की किसी भी भाषा का उपन्यास मलयालम में प्रकाशित होता था। विश्व भाषाओं की क्लासिक कृतियाँ उनमें प्रमुख थी। उन्हीं के द्वारा उपन्यास के भाव,शिल्प,चैतन्य एवं शक्ति का परिचय मलयालम-लेखकों को मिला।

बंकिम चन्द, शरतचन्द, टैगोर आदि की रचनाएँ भी अनुवाद द्वारा मलयालम में प्रकाशित हुईं। दुर्गेश नंदिनी, देवदास, चरित्रहीन, विधिविलास, कपालकुण्डला, उर्मिला, माधवीकंकण, विषवृक्ष, आनन्द मठ, रजनी, चंचलकुमारी, कुलस्त्री, परिमला, मातंगिनी आदि भारत के उत्कृष्ट उपन्यास अनुवाद के माध्यम से तब मलयालम में उपलब्ध हुए।

पाश्चात्य उपन्यासों में सबसे पहले वाल्टर स्कॉट के उपन्यास मलयालम में अनूदित हुए। अइवान हो, क्विन्टिन्टर वार्ड, तालिस्मान, केनिलवर्त आदि उपन्यास मलयालम भाषियों में बहुत लोकप्रिय हुए। अलेक्साण्डर दूमा के कौण्ट आफ मोण्टि क्रिस्टो, ब्लैकड्यूलिप, आर. सी. बार्ण्नस का स्कार्लट पिम्पेर्नल, ऑलिवर गोल्डस्मिथ का विकार ऑफ वेकफील्ड, स्विफ्ट का गलिवेर्स ट्रावल्स, सेर्वान्टीस का डॉन क्विक्साट, चार्ल्स डिकेन्स का हार्ड टाइम्स, हार्डी का मेयर ऑफ कास्टर ब्रिड्ज आदि अनेक उपन्यासों के अनुवाद ने मलयालम साहित्य को समृद्ध किया।

उपन्यासकारों को सर्वाधिक प्रभावित करने वाला उपन्यास था विक्तोर ह्यूगो का 'ले सेराब्ल' का अनुवाद (1925)। मोपेसाँ की कहानियाँ भी प्रियंकर थीं। सामाजिक समानता के लिए मार्क्सवादी आह्वान और ले सेराब्ल का सम्मिलित प्रभाव मानवीयता एवं सामाजिकता को जगाने वाला था। इन्हीं परिस्थितियों में तकषि ने अपनी प्रथम कहानी गरीब (1930) का प्रकाशन किया। कहानी से शुरू हुई नवोत्थान शैली शीघ्र ही उपन्यासों में संक्रमित हुई। उसी को केशवदेव, तकषि, बशीर, पोट्टेक्काट, पोनकुन्नम वर्की आदि लेखकों ने आत्मसात किया।

2.4 चेम्मीन और सामाजिक अवबोध

नवोत्थान काल में कला के सामाजिक लक्ष्य को महत्व दिया जाता था। प्रगतिशील विचारधारा के साहित्यकार उसके अप्रत्यक्ष सन्निवेश को मानने के लिए तैयार नहीं थे। उनका मत था कि उसे प्रत्यक्ष रूप में उद्घोषित करना चाहिए। इस पक्ष के पक्षधर सामाजिक अवबोध को प्राप्त करने वाले और कला के ज़रिये उसका प्रचार करने वाले लेखकों की प्रथम पंक्ति में तकषि को रखा जा सकता है। रंडिडंगषि, तोट्टियुटे मकन आदि रचनाओं में समाज का अलग प्रभाव के रूप में और प्रत्यक्ष यथार्थ दिखाई पड़ता है। लेकिन चेम्मीन उनसे भिन्न हैं। उसमें समाज का एक पात्र के रूप में समाज के नियमों, निरोधों, नैतिक मान्यताओं को हवा में उड़ाते हुए, गहरे प्रेम में बंधित होकर दुःखान्त की ओर बढ़ने वाले नायक-नायिका को चेम्मीन में हम देखते हैं। उनके सामने समाज खलनायक के स्थान पर स्थित है।

चेम्मीन में तकषि रूअरय रु समाज का एक विशद चित्र प्रस्तुत करते हैं। उनके निवासस्थान, परिस्थिति, जीवन शैली, धारणाएँ, आचार-विचार, प्रत्याशाएँ आदि का संबंध सागर से है। उनकी सारी इच्छाओं की पूर्ति सागर करता है, इसलिए वे सागर को माता मानते हैं। वे अपनी अम्मा के अधिक निकट, तट पर निवास करते हैं, छोटी-छोटी झोपड़ियों में। उनमें इसकी आशंका नहीं है कि असीम संपदा से पूर्ण एवं आर्द्रमना माता निकट है तो भविष्य के लिए कुछ बचाकर नहीं रखना है। उनके जीवन-दर्शन एवं जीवन-शैली को स्वरूपित करने वाला एक तत्व है। 'चाकरा' की भारी पकड़ के बाद दूसरी बार भी सागर की ओर जाने वाले चेम्पनकुंजु को उसके मित्र रोक देते हैं। उनका यही दृढ़ विश्वास है कि सागर से संपदा लेने की सीमा होती है।

केरल के सामाजिक क्रम में 'अरय' अवर्ण जाति के हैं। इसलिए वे शोषित हैं। नवोत्थान विचारधारा एवं मानवीय भावधारा से प्रेरित होकर ही तकषि ने 'अरय' को साहित्य के रनिवासों में प्रवेश दिया। इसी मनोभाव की प्रेरणा से तकषि ने उनका तिरस्कार न कर उनके जीवन का निरीक्षण किया। इसी मनोभाव को सहृदय पाठकों तक पहुँचाना प्रगतिशील साहित्य का मुख्य लक्ष्य है। चेम्मीन में वह दूसरा लक्ष्य बन जाता है।

चेम्मीन के अरय नवीन सभ्यता की चालाकियों से अछूते हैं। सौ या दो सौ की संख्या तक के व्यापार तक ही उनका परिचय है। उनकी शिक्षा वहाँ तक ही सीमित है। छठी-सातवीं कक्षा तक पहुँचकर पीछे भाग जाने वाले 'अरय' विद्यार्थियों के बारे में तथा केकड़ों एवं सीपियों को और नखों से बिखरने वाली मछलियों को चुनने वाले उनके बाल्यकाल के बारे में तकषि ने चेम्मीन में लिखा है। बुजुर्गों के संपर्क में आकर प्रकृति-पाठों का अध्ययन भी वे करते हैं। पलनि अनाथ था। फिर भी वह सबसे योग्य नाविक बना। सागर उनकी पाठ्यपुस्तक है। सागर के शान्त-रौद्र भाव, भँवर, तरंगावर्तन, चाकरा के लक्षण आदि का ज्ञान प्राप्त कर उसने सागर को साधा है। अनन्त विस्तृत सागर की छाती में खेलते-सोते वह बड़ा हुआ है। उसी से उसे शक्ति मिली, नया जीवन-दर्शन प्राप्त हुआ।

चेम्मीन के अरय ईश्वर पर भरोसा रखने वाले हैं। सागर माता उनकी प्रत्यक्ष देवता हैं। उसके कोप भाव से उन्हें असीम डर लगता है। वे दृढ़प्रतिज्ञ हैं कि सागर की अप्रीति के योग्य कार्य

नहीं करना चाहिए। चेम्पनकुंजु इन विश्वासों को नहीं मानता। नियमों एवं विश्वास प्रमाणों का धिक्कार करने वाला 'अकेला' व्यक्ति हर समाज में पाया जाता है।

समाज की हर जाति का अपना मुखिया रहता है। 'तुरयिलरयन' अरयों का मुखिया है। वही समाज की समस्याओं का अन्तिम निर्णय सुनने वाला है। नाव एवं जाल खरीदने की आज्ञा प्रदान करना, नाव-जाल खरीदने वालों की सामाजिक योग्यता का निर्णय करना, विवाह के आचार क्रमों का निरूपण करना, सभी प्रकार के सामाजिक कर्मों का नेतृत्व करना, मतभिन्नताओं एवं तर्क विषयों को विधिन्याय सुनाना आदि अरय-मुखिया का दायित्व है। मुखिया की बातें न मानने वाले को भ्रष्ट किया जाता है। भ्रष्ट हो जाने पर एक अरय को धर्म परिवर्तन कर या तो मुसलमान या ईसाई बनना पड़ता है। जब इस प्रकार की एक समस्या चेम्मीन में सामने आती है तो तकषि, जातिगत समस्याओं की अच्छाई-बुराइयों पर विचार नहीं करते हैं। 'करुत्तम्मा गिर गयी तो उसे चौथे वेद (धर्म परिवर्तन) को अपनाना है - यही चक्कि का कथन है। तब करुत्तम्मा कल्पना में अपने को एक मुसलमान लड़की का वेश धारण कर परीक्कुट्टि के साथ चलने फिरने का दृश्य देखती है। तकषि ने प्रेमियों की आँखों से समस्याओं को देखने की रीति अपनाई है।

अरय समाज के अपने आचार क्रम हैं। जन्म, जीवन, मृत्यु, इन तीन अवस्थाओं का नियंत्रण इन आचारों में है। अवैध शिशुजन्म को वे मान्यता नहीं देते हैं। आचार के अनुसार विवाह करना आवश्यक है। 'दुल्हिनधन' देकर लड़की को विवाह के दिन ही पति के घर ले जाना आवश्यक है। चौथे दिवस पति-पत्नी को दावत के लिए घर वाले बुलावा देते हैं। उसके बाद ही वे किसी और के घर में जा सकते हैं। प्रथम प्रसव के भी निश्चित आचार हैं। मरने पर शव को गाड़ दिया जाता है। सभी कर्मों को करने वाला अरय मुखिया है। चेम्पनकुंजु के लालच और हठधर्मिता के कारण विवाह संबंधी आचारों का पूरा-पूरा पालन नहीं हो पाया। मुखिया को और आचारों को धिक्कारने वाले चेम्पनकुंजु का दुःखान्त एक संदेश देता है - सामाजिक जीवन को सुखपूर्ण बनाने के लिए मर्यादाओं, आचारों एवं नीतियों का पालन करना आवश्यक है।

प्रकृति रूपी जाले का बाना बुनकर बिताने वाले हैं मछुआरे। उनके जीवन-दर्शन में इसका प्रतिबिंब देखा जा सकता है। इस जनता में आदिम जीवन-दर्शन (जिसे पाश्चात्य साहित्य में प्रिमिटिविज़्म कहा जाता है) का नियंत्रण बीसवीं शताब्दी में भी रहता है। आने वाले कल के लिए कुछ न बचा रखना, जय-पराजय, सुख-दुःख सब को सागर माता पर अर्पित करना, सागरमाता की आर्द्रता के लिए और पुरुष (पति) की जीवन रक्षा के लिए तट पर पत्नी का पवित्र रहना, विवाह के बाद पुरुष को स्त्री के हाथों सौंपना, सागर को अक्षर भंडार मानना इन सबका समाहार है उनका दर्शन। मछुआरों के समाज का अपनापन इस दर्शन में और इस दर्शन द्वारा रूपायित जीवन शैली में निहित है।

डॉ. के.एम. तरकन का कथन है कि चेम्मन में तकषि के आर्थिक दृष्टिकोण को व्यक्त किया गया है। इस में यही सूचना मिलती है कि श्रमिक वर्ग ने अपने वर्गाधिपत्य की क्रांति शैली को छोड़ दिया है। चेम्मीन यह भी साबित कर सकता है कि आर्थिक शोषण का विरोध करना ज़रूरी है। मछुआरे साधारणतया शोषित वर्ग के हैं। नाव एवं जाल खरीदने के लिए ब्याज पर पैसे उधार देने वाले, सागर से पकड़ी गयी मछली को थोक रूप में खरीद कर दूसरों को बेचने वाले मध्यवर्ती विक्रेता आदि मुख्य रूप से शोषक हैं। इनका कार्य तात्कालिक आश्वासन प्रदान करने वाला है तो भी मछुआरे हमेशा कर्ज़दार बनकर रहेंगे। उनके स्थान पर खड़े रहने की आशा चेंपनकुंजु ने इसलिए की कि उसे मालूम था कि मछुआरों का परिश्रम शोषकों के लिए लाभकारी बन जाता है। उसे रोकने के लिए उसने उन्हीं शोषकों का मार्ग अपनाया। उसने अपनी बेटी के प्रेम संबंध का शोषण किया, उसके प्रेमी से धन उधार लिया और उसे वापस नहीं किया। शोषित मछुआरे की तरह उसका भी सर्वनाश हुआ। तकषि का यही मनोभाव था कि आर्थिक शोषण जिस किसी भी रीति में हो जाए, वह अन्याय है। आर्थिक शोषण चेम्मीन में नहीं हुआ होता तो इस प्रकार की एक दुःखान्त प्रणय कथा भी नहीं होती। आर्थिक स्थिति और प्रेम के बीच घनिष्ठ संबंध है।

साहित्य सृष्टि के लिए चुने गये समाज का पूर्ण ज्ञान, उस समाज को अपना ज्ञान, इन दोनों के अध्ययन के द्वारा ही उस साहित्य सृष्टि के सामाजिक अवबोध का निर्णय कर सकेंगे। चेम्मीन में इन दोनों ज्ञानों का आवश्यक समायोजन हो पाया है। इसलिए मछुआरा समाज के संबंध में असामान्य अवबोध प्रदान करने में तकषि सफल हुए।

2.5 सारांश

इस इकाई में आपने तकषि के युग और युग की परिस्थितियों का आकलन किया गया है। थोड़ी बहुत स्थानीय विशेषताओं के अलावा वह युग सम्पूर्ण भारत में (केरल सहित) स्वतंत्रता आंदोलन एवं सामाजिक आंदोलनों का युग रहा है। केरल में भी तीन राज्य थे जहाँ सामंतशाही से अंतिम संघर्ष जारी था। आम आदमी जो पद, जाति आदि की दृष्टि से सामाजिक विकास की सीढ़ी की सबसे निचली पायदान पर था, आज़ादी के बाद भी उसकी स्थिति में बहुत अधिक परिवर्तन केरल में भी दिखाई नहीं पड़ता। फिर भी स्वतंत्रता आंदोलन एवं सामाजिक आंदोलनों के काफ़ी सकारात्मक प्रभाव समाज पर पडे है। केरल के समाज की बदलती हुई इस तस्वीर को हम बखूबी तकषि की रचनाओं में देख सकते हैं।

2.6 प्रश्न

1 बीसवीं सदी के प्रारंभ में केरल की सामाजिक परिस्थिति कैसी थी?

2 तकषि की रचनाएँ अपने समय एवं समाज का यथार्थ दर्पण है, विचार करें।